Vol. 9
Issue 2
15 July 2018
ISSN 0975 1254 (PRINT)
ISSN 2249-9180 (ONLINE)
www.shodh.net
A Refereed Research Journal
And a complete Periodical dedicated to
Humanities & Social Science Research
शोध संचयन

हिन्दी काव्य में स्त्री के प्रति युगानुरूप परिवर्तित दृष्टिकोण

बीज शब्द :

आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल, प्रयोगवाद, प्रगतिवाद, सिद्ध साहित्य, नाथ साहित्य, कबीर, तुलसी, सुमित्रानंदन पंत, निराला, नागार्जुन आदि।

भारतीय सभ्यता और संस्कृति में स्त्री को अत्यंत उच्च स्थान दिया गया है। 'यत्र नारी पूज्यते' की अवधारणा प्राचीन काल से हमारे देश में विद्यमान रही है। हिंदी काव्य में, आदिकाल से होते हुए आधुनिक काल तक, स्त्री के प्रति भारतीय समाज में परिवर्तित दृष्टिकोण हिंदी कवियों के द्वारा अपनी लेखनी के माध्यम से अत्यंत सटीकता से उकेरा गया और हिंदी साहित्य के इतिहास के सभी कालों में स्त्री का नित परिवर्तित स्वरूप दृष्टिगत होता है। आधुनिक काल के उद्भव के पश्चात स्त्री के प्रति दृष्टिकोण में आमूलचूल परिवर्तन और उसके सांगोपांग स्वरूप का चित्र दिखाई देता है जहाँ उसे देवी, मां, सहचरी, प्राण के रूप में दर्शाना आरंभ हुआ और अंततः प्रगतिवाद ने तो स्त्री को मानवतावाद के उच्चतम शिखर पर प्रस्थापित किया।

*****

डॉ० बॉबी यादव,
सहा0 प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
मा0 कां0 राजकीय महाविद्यालय,
गाजियाबाद।
E-mail: drbobbyyadavjnu@gmail.com

हिन्दी काव्य में स्त्री के प्रति युगानुरूप परिवर्तित दृष्टिकोण

भारतीय समाज और साहित्य में स्त्री की स्थिति नित परिवर्तनशील होती गई है। आरंभ में समस्त भारतीय साहित्य में स्त्री को उपास्य के रूप में प्रस्तुत किया गया है। हिन्दी साहित्य भी इसी परंपरा का वाहक है अत: इसमें भी स्त्री के दैवीय गुण संपन्न स्वरूपों का निदर्शन होता है।

हिन्दी साहित्य के प्रारंभिक कालों में स्त्री के चित्रण में एकरूपता का आभास होता है। सिद्ध साहित्य में जहां स्त्री को योग-साधना के केन्द्र में रखकर दैवीय स्वरूप प्रदान किया गया, वहीं ''वज्रयानियों की योगतंत्र साधनाओं में मद्य तथा स्त्रियों का विशेषत: डोमिनी, रजकी आदि का अबाध सेवन एक आवश्यक अंग था। सिद्ध कण्हपा डोमिनी का आह्वान गीत इस प्रकार गाते हैं-

'नगर बाहिरे डोंबी तोहरि कुडिया छड़।
छोइ जाइ सो बाह्य नाड़िया।।' [1]

इस काल में स्त्रियों को योगिनी तथा शक्ति के रूप में भी प्रस्तुत किया गया। नाथ पंथ के प्रवर्तक गोरखनाथ ने अपने गुरु मछन्दरनाथ को नारी-साहचर्य से बाहर निकाला और हठयोग का उपदेश दिया क्योंकि यह माना जाता है कि ''सिद्धगण नारी-भोग में विश्वास करते थे, किन्तु नाथपन्थी उसके विरोधी थे।''[2]

इस प्रकार हमने देखा कि आदिकाल में जहां स्त्री को उपभोग की वस्तु के रूप में देखा जाता था और ईश्वर-प्राप्ति के बहाने उनके शोषण के तमाम चित्र उपस्थित हैं वहीं जैन-साहित्य में स्त्री को पवित्रता से ओत-प्रोत प्रस्तुत किया गया है। उनके जैन मत में दीक्षित होकर सात्विक जीवन व्यतीत करने के सैंकड़ों वर्णन उपलब्ध हैं। 'चन्दनबालारास' में चन्दनबाला अपनी मालकिन द्वारा दिए गए अपार कष्टों को सह कर भी कुमार्ग की ओर प्रवृत नहीं हुई और अपने सतीत्व की रक्षा करती रही और अंत में महावीर की दीक्षा प्राप्त करके उसने मोक्ष प्राप्त किया। इसमें कोशा वेश्या और सीता को भी जैन धर्म अपनाते हुए दर्शाया गया है।

रासो साहित्य में स्त्री के रमणीय स्वरूपों का चित्रण देखने को मिलता है। इसमें नायिका-भेद, नख-शिख वर्णन आदि अपार रूप में उपलब्ध है। यहां श्रृंगार के वियोग और संयोग दोनों पक्षों का चित्रण देखा जा सकता है। 'बीसलदेव रासो' में राजमती जैसी कुलीन गृहिणी है जो स्त्री को गरिमामयी रूप में उपस्थित करती है। 'पृथ्वीराज रासो' में स्त्री सौंदर्य तथा उसके रूप और प्रेम के चित्र उकेरे गये हैं। स्त्री हर जगह उपस्थित है। वह युद्ध के भी केन्द्र में है और विलास के भी। 'वसन्त-विलास' नामक पुस्तक के ''चौरासी दोहों में वसन्त और स्त्रियों पर उसके विलासपूर्ण प्रभाव का मनोहारी चित्रण प्रस्तुत किया गया है। इस काव्य में प्रकृति और नारी दोनों का मदोन्मत्त स्वरूप श्रृंगार रस की तीव्र धारा प्रवाहित करता है। आदिकाल को विद्वानों ने अब तक वीरगाथाओं और धार्मिक उपदेशों का ही युग माना था, 'वसन्त-विलास' ने 'राउरवेल' की श्रृंगार-भावना को चरम सीमा पर पहुँचा दिया है।''[3] इस प्रकार हमने देखा कि आदिकाल में स्त्री के व्यापक रूप उपलब्ध हैं, कहीं वह गृहिणी के रूप में उपस्थित है तो कहीं प्रेयसी, रमणी, साध्वी, योगिनी आदि रूपों में भी उपस्थित है।

आदिकाल भक्तिकाल की पूर्व-पीठिका है अत: स्त्री के प्रति जो दृष्टि आदिकाल में थी वही अपनी तमाम विशेषताओं के साथ भक्तिकाल में भी चली आई। भक्तिकाल पर चूंकि अनेक सिद्धांतों और विचारों का प्रभाव पड़ा तथापि उसमें स्त्री को माया-स्वरूप माना गया।

कबीर मानते हैं कि- 'नारी की झाईं परत, अंधा होत भुजंग। ता नर की कौन गति, जो नित नारी के संग।' कबीर ने 'कनक और कामिनी' दोनों का परित्याग करने की बात कही और 'एक कनक और कामिनी, दुर्गम घाटी दोय' कहकर तात्कालिक पुरुषवादी दृष्टिकोण को वाणी दी। उन्होंने दोनों को ही मानव मात्र का शत्रु बताया और माना कि- 'नारि नसावै तीन सुख, जा नर पासै होय। भगति मुकति निज ज्ञान में, पैसि न सकई कोय।' उनका मानना है कि कामिनी के ही कारण मानव भक्ति, मुक्ति और ज्ञान में प्रवेश नहीं कर पाता। उन्होंने कभी तो कामिनी को 'काली नागिणी' कहा और कभी 'कामिणी मीनों खांड़ि की, जे छेड़ौं तो खाई' कहकर उसे 'खांड की बनी हुई मीठी मछली' कहा है। इस प्रकार कबीर की स्त्री के प्रति दृष्टि परंपरागत ही रही है।

महाकवि तुलसीदास को तो कतिपय आलोचकों ने स्त्री-विरोधी ही माना है, जिसका कारण उनकी निम्न पक्तियां हैं- ''ढोल, गंवार, शूद्र, पशु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी'', ''जिमि स्वतंत्र होइ बिगरहिं नारी'', परंतु आचार्य शुक्ल मानते हैं कि ''सब रूपों में स्त्रियों की निंदा उन्होंने नहीं की है। केवल

1. आ0 रामचन्द्र शुक्ल, 'हिन्दी साहित्य का इतिहास', नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, सं0 2056 वि, पृष्ठ 7
2. डॉ0 नगेन्द्र, 'हिन्दी साहित्य का इतिहास', मयूर पेपरबैक्स, दिल्ली, 1998, पृष्ठ 67
3. डॉ0 नगेन्द्र, 'हिन्दी साहित्य का इतिहास', मयूर पेपरबैक्स, दिल्ली, 1998, पृष्ठ 77

प्रमदा या कामिनी के रूप में, दाम्पत्य रति के आलंबन के रूप में, की है- माता, पुत्री, भगिनी आदि के रूप में नहीं। इससे सिद्ध है कि स्त्री जाति के प्रति उन्हें कोई द्वेष नहीं था।''[4] तथापि डॉ0 बच्चन सिंह मानते हैं कि 'नारी के संबंध में उनका दृष्टिकोण सामंतवाद का पोषक ही ठहरता है। इधर-उधर से कुछ पंक्तियों को संदर्भ से काटकर उद्धृत कर देने से उनके मंतव्य पर पर्दा नहीं डाला जा सकता।'[5] इस प्रकार हम देखते हैं कि उस युग के महान कवियों का स्त्रियों के प्रति दृष्टिकोण दुराग्रहपूर्ण था। यह दृष्टिकोण आगामी काल में और भी अधिक दूषित और एकांगी होता चला गया।

रीतिकाल में तो स्त्री केवल श्रृंगारिक मूर्ति बनकर रह गई और वह नख-शिख वर्णन, नायिका भेद की सीमाओं के भीतर ही अंकित होकर रह गयी। आजकल की बोलचाल की भाषा में कहा जाए तो स्त्री को 'आईटम गर्ल' बनाकर प्रस्तुत किया गया। उसे सामंती जीवन की विलासिता के साधन के रूप में प्रस्तुत किया गया। स्त्री की बात तो छोड़ ही दीजिए 'कविता' तक को केवल मनोरंजन का साधन माना गया। सामंती दृष्टि के कारण स्त्री को भोग की वस्तु माना गया और उसकी समस्त चेष्टाओं, भावों, भावनाओं आदि को काम-अभिव्यक्ति के उपादान मान कर उसे कुतूहल की दृष्टि से देखा गया। यद्यपि डा0 नगेन्द्र इस काल में सीमित ही सही, कुछ सामान्य गृहस्थ जीवन के चित्र खोज़ ही लेते हैं।

आधुनिक काल में आकर स्त्री के सांगोपांग स्वरूप का चित्रण प्राप्त होता है। इस काल में स्त्री जीवन की विविध समस्याओं बाल-विवाह, बहु-विवाह, सती-प्रथा आदि के विरूद्ध स्वर मुखर किया गया। 'नीलदेवी' के समर्पण में अंग्रेज स्त्रियों की भूरि-भूरि प्रशंसा की गई, भारतीय स्त्रियों को उनसे सीखने की प्रेरणा दी गई। भारतेन्दु ने अपनी बहन को शिक्षा प्रदान करवाई। उन्होंने स्त्री-शिक्षा के महत्व को समझाया और दूसरों को समझाने का प्रयास किया। भारतेन्दु मद्रास, कलकत्ता और बम्बई विश्वविद्यालय से उत्तीर्ण महिलाओं को साड़ी भेंट किया करते थे।

भारतेन्दु-युग में अस्पृश्यता, नारी-शिक्षा, बाल विवाह से त्रस्त विधवाओं की दशा पर अनेक कविताएं लिखी गई। प्रतापनारायण मिश्र ने 'कौन करेजो नहि कसकत सुनि बिपति बालबिधवन की' लिखकर बाल-विधवाओं के कष्ट उजागर किए। भारतेन्दु युग में श्रृंगार प्रधान रचनाओं का सृजन तो हुआ परंतु उसमें मर्यादा और संयम का ध्यान रखा गया तथा नख-शिख और नायिकाभेद का परिहार ही किया गया। भारतेन्दु ने स्त्री-शिक्षा के लिए 1874 ई0 में 'बालाबोधिनी' नामक पत्रिका प्रकाशित की। बालकृष्ण भट्ट ने 'बालविवाह' और राधाकृष्णदास ने 'दु:खिनी बाला' लिखा। इनके माध्यम से लेखकों ने स्त्री जीवन की विकट समस्याओं को उजागर किया।

छायावाद एक नए प्रकार के धरातल पर प्रकट हुआ। इसने काव्य की स्थापित भूमि को तोड़ा और इतिवृत्तात्मकता और उथलेपन को चुनौती दी। छायावाद में स्त्री 'देवी, मां, सहचरि, प्राण' के रूप में सामने आती है और उसे कहीं 'शक्ति' का प्रतिरूप एवं 'श्रद्धारूपिणी' माना गया है और कहीं दया, माया, ममता, त्याग, बलिदान, सेवा, समर्पण, अगाध विश्वास आदि की मूर्ति माना गया है।

कविवर पन्त, जो 'सुकुमार कल्पना के कवि' माने जाते हैं, ने भारतीय स्त्री के सहज एवं स्वाभाविक सौन्दर्य की अत्यन्त मार्मिक प्रस्तुति की है। उन्होंने स्त्री को अनन्त सुषमा से परिपूर्ण माना और उसके प्रति उदात्त भावनाओं का प्रदर्शन करते हुए उसके जीवन के विविध पहलुओं को उजागर किया। स्त्री केवल प्रेयसी ही नहीं है अपितु उसके जीवन के अन्य उद्देश्य भी हैं। वह केवल अपने जीवन के कुछ समय विशेषत: यौवनावस्था के आरम्भ में ही प्रेयसी के रूप में होती है, उससे पहले वह एक पुत्री एवं बहन होती है और बाद में मां, बहू, देवरानी, जेठानी आदि होती है तथा उसके बाद सास, समधिन, दादी, नानी होती है परन्तु कवियों को तो केवल उसके जीवन के कुछेक वर्षों के चित्रण में ही रस की अनुभूति होती है। परन्तु इस रूप को भी कविवर पन्त ने तोड़ने का साहस दिखाया और 'ग्राम्या' में 'ग्राम्य युवती', 'ग्राम-नारी', 'ग्रामवधू', 'ग्रामश्री' आदि में स्त्री के प्रति संकीर्ण दृष्टि से बाहर निकले और उसके व्यक्तित्व को विकास का अवसर प्रदान किया ।

छायावादी काव्य में स्त्री के महत्व का सर्वाधिक प्रतिपादन किया गया है। जयशंकर प्रसाद 'कामायनी' में लिखते हैं- 'तुम भूल गए पुरूषत्व मोह में, कुछ सत्ता है नारी की, समरसता है संबंध बनी अधिकार और अधिकारी की।' इस प्रकार प्रसाद स्त्री-पुरुष की समता की बात करते हैं और स्त्री के त्याग, समर्पण और बलिदान को जनमानस के समक्ष प्रस्तुत करते हैं ।

निराला ने काव्य को तो छंद-मुक्त किया ही, भारतीय स्त्री को भी उच्च स्थान पर प्रस्थापित किया। उन्होंने विधवा स्त्रियों

4. आ0 रामचन्द्र शुक्ल, 'गोस्वामी तुलसीदास', नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, सं0 2053 वि, पृष्ठ 31

5. डॉ0 बच्चन सिंह- 'हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास', राधाकृष्ण, दिल्ली, 2000, पृष्ठ 143

की क्रंदन-कथा को वाणी दी और पुत्री 'सरोज' की करुण कथा को प्रकट किया। उनकी कविता 'वह तोड़ती पत्थर' में स्त्री के श्रमशील रूप का चित्रण किया गया है। इसे प्रगतिवाद की पहली कविता भी माना जाता है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि प्रगतिवाद का तो आरम्भ ही स्त्री के प्रति स्वस्थ दृष्टिकोण से और उसके श्रमशील जीवन को उजागर करते हुए हुआ। नागार्जुन 'सिन्दूर तिलकित भाल' में भारतीय स्त्री की वह छवि प्रस्तुत करते हैं जो आज भी गाँव-शहर-कस्बे में विद्यमान है। वह स्त्री को समाज के भीतर के एक अनिवार्य अंग के रूप में देखते हैं। डा0 नामवर सिंह के शब्दों में कहा जाए तो- ''नारी-सौन्दर्य को भी नागार्जुन उसी खुली दृष्टि से देखते हैं और वैसे ही अकुंठ भाव से उसका वर्णन भी करते हैं। मैथिली की एक कविता है ''एक फाँक आँख, एक फाँक नाक'' जिसमें पल-भर के लिये खिडकी से गोरे गोल मुखचन्द्र का अर्धांश दिख जाने के बाद कवि कहता है: ''कितनी देर तक रही नाचती कपाल के भीतर की कटोरी में/ धारण किये क्रमशः तकली का रूप/ एक फांक आंख/ एक फांक नाक''। इसके अतिरिक्त 'तन गई रीढ़' और 'यह तुम थीं' जैसी कुछ कविताएं भी हैं जहां किसी स्त्री के दरस परस से उत्पन्न होने वाली अनिर्वचनीय अनुभूति को शब्दों में साकार किया गया हे।''[6]

केदारनाथ अग्रवाल के यहाँ ग्रामीण जीवन में श्रमशील स्त्री के अपूर्व चित्र उपस्थित हैं। उनके यहाँ मजबूत बुंदेलखण्डी महिलाओं का जीवन अपने सभी आयामों में चित्रित है। वे कभी तो 'मैके से आई बेटी' का चित्रण करते हैं, कभी 'नौजवान ढीठ लडकी' का। उन्हें 'सौन्दर्य का कवि' माना जाता है। उनके यहाँ प्रकृति और नारी के असंख्य सुन्दर चित्र अंकित हैं ।

प्रगतिवाद के पश्चात वैयक्तिकता का स्वर मुखर होता गया और स्त्री को नए-नए उपमान दिये जाने लगे। आधुनिक युग में स्त्री की भूमिका शनैः शनैः बदलती गई और वह नित परिवर्तनशील है। इक्कीसवीं सदी में स्त्री-लेखिकाओं ने तो स्त्री को पूर्णतः स्वतंत्र-स्वच्छंद कर दिया तथापि वह परुष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर अपनी महत्ता में वृद्धि करती गई और जीवन के समस्त आयामों में उसकी उपस्थिति परिलक्षित है।

6. नागार्जुन- 'प्रतिनिधि कविताएं' - राजकमल, दिल्ली, 2000, पृष्ठ 81

◆◆◆

(Continued from Page No. 19) **Impact of Research Methodology.....**

Study conducted by Abdulghani HM. and et all, supports this findinding.

Suggestions - Capacity building programme is very useful and it should be organized on regular basis in required manner.

Limitations - Findings of this research paper is based on a special workshop which was organized by APS University Rewa and sponsored by ICSSR New Delhi so they do not claim any generalization. Researchers may test its reliability by conducting similar studies.

References:

1. Abdulghani HM, Shaik SA, Khamis N, Al-Drees AA, Irshad M, Khalil MS, Alhaqwi AI, Isnani A "What factors determine academic achievement in high achieving undergraduate medical students? A qualitative study." Retrieved from https://www.ncbi.nlm.nih.gov/pubmed/?term=Abdulghani%20HM%5BAuthor%5D&cauthor=true&cauthor_uid=2461778
2. by Abdulghani,HM, Al-Drees AA, Khalil MS, Ahmad F, Ponnamperuma GG, Amin Z What factors determine academic achievement in high achieving undergraduate medical students? A qualitative study. Retrieved from https://www.ncbi.nlm.nih.gov/pubmed/24617784

◆◆◆